

Vol. 12 January '19 No. 6
Annual Subscription : Rs 100
Rs. 10/- per copy

ब्रह्मार्पण **BRAHMARPAN**

वेदोऽखिलो
धर्ममूलम्

A Monthly publication of
Brahmasha India Vedic
Research Foundation



Brahmasha India Vedic Research Foundation

ब्रह्मशा इंडिया वैदिक रिसर्च फाउन्डेशन

C2A/58 Janakpuri, New Delhi - 110058

छुझे दीपक जला लूँ

-महादेवी वर्मा

सब बुझे दीपक जला लूँ।

घिर रहा तम आज दीपक-रागिनी अपनी जगा लूँ!!

क्षितिज-कारा तोड़ कर अब

गा उठी उन्मत्त औंधी,

अब घटाओं में न रुकती

लास-तन्मय तड़ित् बाँधी,

धूलि की इस वीण पर मैं तार हर तृण का मिला लूँ!

भीत तारक मूँदते दृग

भ्रान्त मारुत पथ न पाता

छोड़ उल्का अंक नभ में

ध्वंस आता हरहराता,

उँगलियों की ओट में सुकुमार सब सपने बचा लूँ!

लय बनी मृदु वर्तिका

हर स्वर जला बन लौ सजीली,

फैलती आलोक-सी

झंकार मेरी स्नेह गीली,

इस मरण के पर्व को मैं आज दीपावली बना लूँ!

देख कर कोमल व्यथा को

औंसुओं के सजल रथ में,

मोम-सी सार्धे बिछा दी

थी इसी अंगार-पथ में

स्वर्ण हैं वे मत हो अब क्षार में उनको सुला लूँ।

अब तरी पतवार लाकर

तुम दिखा मत पार देना,

आज गर्जन में मुझे बस

एक बार पुकार लेना!

ज्वार को तरणी बना मैं इस प्रलय का पार पा लूँ!

आज दीपक राग गा लूँ!



**BRAHMASHA INDIA VEDIC
RESEARCH FOUNDATION**

C2A/58, Janakpuri,
New Delhi-110058

Tel :- 25525128, 9313749812

email: deekhal@yahoo.co.uk

brahmasha@gmail.com

Website : www.thearyasamaj.org

of Delhi Arya Pratinidhi Sabha

Sh. B.D. Ukhul

Secretary

Dr. B.B. Vidyalkar 0124-4948597

President

Col.(Dr.) Dalmir Singh (Retd.)

V.President

Dr. Mahendra Gupta V.President

Ms. Deepti Malhotra

Treasurer

Editorial Board

Dr. Bharat Bhushan Vidyalkar,

Editor

Dr. Harish Chandra

Dr. Mahendra Gupta

Shri Shiv Kumar Madan

लेख में प्रकट किए विचारों के
लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं
हैं। किसी भी विवाद की
परिस्थिति में न्याय क्षेत्र दिल्ली
ही होगा।

Printed & Published by

B.D. Ukhul for Brahmasha India

Vedic Research Foundation

Under D.C.P.

License No. F2 (B-39) Press/

2007

R.N.I. Reg. No. DELBIL/ 2007/22062

Price : Rs. 10.00 per copy

Annual Subscription : Rs. 100.00

Brahmarpan January'19 Vol. 12 No.6

पौष-माघ 2075 वि.संवत्

ब्रह्मार्पण

BRAHMAPAN

A bilingual Publication of Brahmasha
India Vedic Research Foundation

CONTENTS

1. बुझे दीपक जला लूँ 2
-महादेवी वर्मा
2. संपादकीय 4
3. मौलिक राजनैतिक चिन्तक महर्षि
दयानन्द 7
-डॉ. धर्मपाल आर्य
4. श्रद्धानन्द शूर अलबेला -II 11
5. आज के संदर्भ में श्री राम 13
6. कश्मीर नरेश और भाई परमानन्द 18
7. आधी शताब्दी के बाद सरदार
पटेल 19
-डॉ. रवीन्द्रकुमार
8. मिसाइल मैन कलाम का स्मरण 22
9. भ्रान्ति-निवारण 23
-पं. नन्दलाल निर्भय
10. रानी दुर्गावती ने वीरमरण स्वीकार
किया 27
-संदीप पत्रे
11. The World Said, 'This was a Man'
(Jawahar Lal Nehru)
-Karan Singh 30
12. Dialogue Between Prince Rama &
Sage Vasistha
-Raghuandan 33
13. Vedas On Education
-N.K. Chaudhary 35

संपादकीय

क्षेत्रवाद के कारण बलात् पलायन

-डॉ. भारत भूषण विद्यालंकार

भारतीय संविधान की धारा 19 में इस बात की व्यवस्था है कि किसी भी भारतीय नागरिक को देश के किसी भी राज्य में रहने या स्थाई रूप से बसने का अधिकार है। उस प्रदेश के निवासी किसी दूसरे प्रदेश से आकर बसने वाले व्यक्ति के विरुद्ध कोई आपत्ति नहीं कर सकते। 28 सितंबर 2018 को गुजरात के साबरकाँठा जिले के बिहार के एक मजदूर ने 14 महीने की बच्ची से बलात्कार किया। यह ऐसा जघन्य अपराध था जिसके लिये कानून से कठोर से कठोर सजा दी जा सकती है। अपराधी को गिरफ्तार कर लिया गया है। इस घटना के बाद इस अपराध के लिए सभी गैर गुजरातियों, विशेष रूप से, बिहार और उत्तरप्रदेश के लोगों को दोषी मानकर उन्हें मार-पीट कर और धमका कर गुजरात से खदेड़ दिया गया। लगभग 60,000 लोग इससे प्रभावित हुए जिन्हें गुजरात से निकल कर अपना काम धन्धा छोड़कर अपने प्रदेश में जाना पड़ा।

गुजरात में बलात्कार (रेप) की इस घटना के बाद उत्तर भारतीयों का गुजरात से पलायन आम चुनाव से पूर्व क्षेत्रीयता की लड़ाई का बड़ा मुद्दा बन सकता है। कांग्रेस ने तत्काल गुजरात सरकार को उत्तर-भारतीयों के गुजरात से पलायन को न रोक पाने का दोषी ठहरा दिया। कांग्रेस के प्रवक्ता ने बार-बार बल देकर कहा कि राज्य सरकार पर कानून और व्यवस्था की जिम्मेदारी है इसलिए भारतीय जनता पार्टी की सरकार प्रदेश में पर्याप्त रोजगार पैदा करने में अक्षम रही है इसी से लोगों में गुस्सा है और वे समझते हैं कि हम गुजरातियों के रोजगार पर ये कब्जा किए हुए हैं।

इसके विपरीत भारतीय जनता पार्टी का कहना है कि कांग्रेस के विधायक अल्पेश ठाकुर का 1 अक्टूबर को भड़काने वाला भाषण पलायन के लिए जिम्मेदार है। अल्पेश का कहना था कि ये बाहरी लोग यहाँ अपराध करते हैं, यहाँ के गाँव वालों से मार-पीट कर अपने घरों को चले जाते हैं। ठाकुर ने बाद में कहा कि मैंने तो ऐसा नहीं कहा लेकिन उसके भाषण का वीडियो उपलब्ध है। प्रवासियों के विरुद्ध इस बात के पुख्ता प्रमाण हैं कि यह हिंसा ठाकुर की निजी गुजरात क्षत्रिय ठाकुर सेना ने की थी। इस मामले में राज्य सरकार ने सैकड़ों संदिग्ध अपराधियों को गिरफ्तार भी किया है। सरकार की ओर से आवश्यक कदम उठाए गए ताकि प्रवासी उत्तरभारतीयों में विश्वास पैदा हो। सेना ने फ्लैग मार्च भी किया। इसका परिणाम यह हुआ कि उत्तर भारतीयों के पलायन में काफी कमी आई और वे लोग पुनः लौटने लगे। अब प्रश्न उठता है कि क्या क्षेत्रीयता के मुद्दे पर चुनाव लड़ा जा सकता है? क्या क्षेत्रवाद के मुद्दे को उछालकर राजनीतिक दल चुनावी वातावरण को प्रभावित कर सकते हैं? यह प्रश्न इसलिए उठ रहा है क्योंकि गुजरात में बलात्कार की घटना के कारण उठा गुस्सा क्षेत्रीयता की लड़ाई में बदल गया। इस मामले का आरोपी चूँकि बिहार का है, इसलिए घटना के बाद राज्य में रह रहे बिहार-यूपी से जुड़े लोगों पर हमले हुए और हजारों लोगों को गुजरात छोड़ना पड़ा। यह घटना गुजरात में ठीक ऐसे समय में हुई, जब वहाँ नौकरियों में आरक्षण देने की माँग उठ रही है। इस घटना के बाद पूरे देश में राजनीति तेज हुई और क्षेत्रवाद की लड़ाई चुनावी मुद्दे में बदलने लगी। सभी दलों के बीच आरोप-प्रत्यारोप तेज हो गए हैं। गुजरात से लेकर बिहार तक की राजनीति में यह मुद्दा उछलने लगा है।

क्षेत्रवाद के नाम पर ऐसी लड़ाई पहली बार नहीं हो रही है। महाराष्ट्र में मराठी और गैर-मराठी के बीच नौकरी और दूसरे

मामलों में विवाद होता रहा है और यह चुनावी मुद्दा बनता रहा है। वहाँ राज ठाकरे की लड़ाई इसी मुद्दे पर शुरू हुई। दक्षिण भारत में हमेशा क्षेत्रीयता के मुद्दे राजनीतिक मसलों को तय करते रहे हैं। हिन्दी थोपने के नाम पर समय-समय पर विवाद उठता रहा है। वहाँ इसके कारण हिन्दी भाषी उत्तर-भारतीयों की दुकानों पर हमले होते रहे हैं। तमिलनाडु में क्षेत्रीयता इतनी हावी है कि इसने यहाँ राष्ट्रीय दलों का वर्चस्व ही समाप्त कर दिया है। इसी संदर्भ में बिहार, उड़ीसा, आन्ध्रप्रदेश/तेलंगाना में राज्यों को विशेष दर्जा देने की माँग उठती रही है। इसी को लेकर चंद्रबाबू नायडू ने भारतीय जनता पार्टी से नाता तोड़ लिया। इस माँग का उद्देश्य उस राज्य के लिए विशेष आर्थिक बजट का प्रावधान करवाना है। अतः यह मुद्दा भी क्षेत्रीयता की लड़ाई का रूप ले रहा है। अन्ततः, ऐसे मुद्दे हमेशा राष्ट्रीय दलों की परेशानी का कारण होते हैं। जिस दल की सरकार केन्द्र में होती है उसे ही ये मुद्दे मुश्किल में डालते हैं। कोई भी राष्ट्रीय दल किसी क्षेत्रीय मुद्दे पर स्पष्ट रुख नहीं अपना सकता क्योंकि इसका प्रभाव बहुआयामी हो सकता है, जैसे बिहार को विशेष राज्य का दर्जा देने के प्रश्न को या आन्ध्रप्रदेश की माँगों का आँख मूँद कर समर्थन नहीं कर सकते। यदि एक राज्य की माँगों के सामने झुकेंगे तो दूसरे राज्यों से भी ऐसी ही माँगें उठने लगेंगी। आम चुनाव से पहले क्षेत्रीयता का उभार मोदी सरकार के विरुद्ध विपक्ष को हथियार दे सकता है। यदि भाजपा ने राष्ट्रवाद, आक्रामक हिन्दुत्व को मुद्दा बनाया तो जातिवाद या क्षेत्रीयता जैसे मुद्दों से इसे काउंटर किया जा सकता है। वस्तुतः आम चुनाव से पूर्व ऐसे मुद्दों के कारण देश का राजनीतिक वातावरण दूषित हो सकता है।

संपादक

मौलिक राजनैतिक चिन्तक महर्षि दयानन्द

-डॉ. धर्मपाल आर्य

युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती को वेदोद्धारक, नारी जाति का सम्मान कराने वाला, अस्पृश्यता के कोढ़ को समाप्त कराने वाला, सामाजिक कुरीतियों को मिटाने वाला, देश की सुषुप्त आत्मा को जगाने वाला, उनको अतीत के गौरव का स्मरण कराने वाला, उनको अस्मिता की पहचान कराने वाला, गौरक्षा के लिए देशवासियों की भावनाओं को जगाने वाला, पराधीनता की श्रृंखलाओं को काटकर स्वाधीनता, स्वतन्त्रता की भावना जगाने वाला, स्वराज्य की अवधारणा से परिचित कराने वाला, आर्यभाषा का प्रचार-प्रसार करने वाला माना जाता है। इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिए स्वामी जी महाराज ने आर्यसमाज की स्थापना की, परोपकारिणी सभा की स्थापना की तथा गौकृष्यादिरक्षिणी सभा का भी निर्माण किया। महर्षि दयानन्द सरस्वती बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी थे। उनके अमरग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका तथा संस्कार विधि उनके मौलिक एवं मानवीय चिन्तन के परिचायक हैं।

उन्होंने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के 'ब्रह्म विद्या विषय' के अन्तर्गत लिखा है।- जितनी सत्यविद्या संसार में हैं, वे सब वेदों से ही निकली हैं, उनमें से पहले ब्रह्मविद्या संक्षेप में लिखते हैं। अपने कथन की पुष्टि के लिए उन्होंने वेदों से अनेक प्रमाण दिए हैं। इसी प्रकार 'राजाप्रजा धर्म विषय' के अन्तर्गत भी उन्होंने वेदमन्त्रों को ही आधार बनाया है। वे लिखते हैं- वयं प्रजापतेः प्रजा अभूम-अर्थात् सब मनुष्य लोगों को निश्चय करके जानना चाहिए कि हम लोग परमेश्वर की प्रजा हैं और वही हमारा एक राजा है।

वे कहते हैं कि तीन प्रकार की सभा ही को राजा मानना चाहिए, एक मनुष्य को कभी नहीं। वे तीनों ये हैं- प्रथम राजप्रबन्ध के लिए एक 'आर्यराज सभा' जिससे विशेष करके सब राजकार्य ही सिद्ध किए जायें। दूसरी 'आर्य विद्या सभा' जिससे सब प्रकार की विद्याओं का प्रचार किया जाए। तीसरी 'आर्य धर्म सभा' जिससे धर्म का प्रचार किया जाए। महर्षि दयानन्द ने प्रजातान्त्रिक शासन पद्धति का पक्ष लिया था। वे राजा की शक्ति सभाओं में निहित मानते थे। वे मानते थे

कि राजा के ये तीन प्रमुख कर्तव्य हैं आगे उन्होंने इसी क्रम में यह भी स्पष्ट किया है कि सब शत्रुओं को जीतकर नाना प्रकार के सुखों से विश्व को परिपूर्ण करना चाहिए।

उन्होंने अपनी बात को वेद के आधार पर व्याख्यायित किया कि जिस देश में उत्तम विद्वान् ब्राह्मण, शूरवीर क्षत्रिय लोग मिल के राज कार्यों को सिद्ध करते हैं, वही देश धर्म और शुभ क्रियाओं से संयुक्त होकर सुख को प्राप्त होता है। वे सत्यार्थप्रकाश में लिखते हैं कि तीनों सभाओं की सम्मति से राजनीति के उत्तम नियम और नियमों के अधीन सब लोग व्यवहार करें, सबके हितकारक कार्यों में सम्मति करें। सर्वहित करने के लिए परतन्त्र और धर्मयुक्त कामों में अर्थात् जो जो निज के काम हैं उन उन में स्वतन्त्र रहें। इसी बात को उन्होंने आर्यसमाज के दसवें नियम में भी कहा है।

पिछले दिनों इस बात की बड़ी चर्चा थी कि देश के शासक राजधर्म का पालन करें। वह राजधर्म क्या है। महर्षि दयानन्द ने राजा के गुणों का वर्णन करके स्पष्ट किया है कि जो-जो इन गुणों से समन्वित है और जो प्रजाहित में अपने इन गुणों के अनुरूप कार्य करता है, वह राजधर्म है। विद्युत् के समान शीघ्र ऐश्वर्यकर्ता, वायु के समान प्राणवान् प्रिय और हृदय की बात जानने वाला, यम के समान पक्षपात रहित अर्थात् न्यायाधीश की भाँति सभी को समानता का अधिकार देने वाला, सूर्य के समान न्याय धर्म, विद्या का प्रकाशक, अन्धकार, अविद्या, अन्याय को मिटाने वाला, अग्नि के समान दुष्टों को भस्म करने वाला, वरुण के समान दुष्टों को अनेक प्रकार से बाँधने वाला, चन्द्रमा के समान श्रेष्ठ पुरुषों को आनन्द देने वाला ही राजा होना चाहिए। राजा को ऐसा प्रतापी होना चाहिए कि कोई उसकी ओर वक्र दृष्टि से देखने की सामर्थ्य न जुटा पाए। वह अग्नि, वायु, सूर्य, सोम के समान धर्मप्रकाशक, धनवर्द्धक और दुष्टों का संहारक तथा महा ऐश्वर्यवान् होना चाहिए।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने मनुस्मृति से भी उद्धरण देकर स्पष्ट किया है कि सच्चा राजा कौन है? जो पवित्रात्मा, सत्याचार और सत्पुरुषों का संगी यथावत् नीतिशास्त्र के अनुकूल चलने वाला, श्रेष्ठ पुरुषों के सहाय से युक्त बुद्धिमान है, वही न्यायरूपी दण्ड के चलाने में सहायक होता है। महर्षि दयानन्द

सभा और समिति की व्यवस्था देते हैं। ये दोनों शब्द आज के प्रजातन्त्र के निकट हैं परन्तु उनकी मान्यता ऐसी नहीं है कि कोई भी केवल 'वोट' के बल पर इन सभाओं तथा समितियों का सदस्य बन जाये। वे कहते हैं कि सभा में चारों वेद, न्यायशास्त्र, निरुक्त, धर्मशास्त्र आदि के वेत्ता विद्वान सभासद हों। वे यह भी कहते हैं कि केवल मताधिक्य से ही निर्णय न लिये जायें अपितु एक अकेला सब वेदों को जानने वाला, द्विजों में उत्तम संन्यासी जिस धर्म की व्यवस्था करे, वही श्रेष्ठ धर्म है। महर्षि दयानन्द की यह व्यवस्था मौलिक एवं क्रान्तिकारी है। आज संसद में कितने लोग हैं जो वेद के ज्ञाता हैं। राज्य सभाओं और लोक सभाओं में स्वतन्त्र सम्मति रखने वाले कितने हैं? न्यूनतम साझा कार्यक्रम के अन्तर्गत नियमों एवं सिद्धान्तों को तिलांजलि देने वाले अनेक हैं। चाटुकारों से सभाएँ भरी पड़ी हैं। यही स्थिति सामाजिक संगठनों की भी है। सभी अध्यक्षों की हाँ में हाँ मिलाने वाले हैं। चारों ओर इस बात की होड़ है कि व्यवस्थाओं का दोहन कौन अधिक से अधिक कर सके।

महर्षि दयानन्द ने राजा के व्यसनों को भी गिनाया है—मृगया, जुआ, दिवाशयन, कामकथा, परनिन्दा, अति स्त्री संग, नाचना व नाच देखना, वृथा समय नष्ट करना आदि राजा के दुर्गुण हैं। ऐसे व्यक्ति न राजा होने चाहिए, न सभासद और न ही किसी अन्य पद पर रखे जाने चाहिए। उन्होंने सचिव नियुक्ति के लिए भी बड़ी मौलिक व्यवस्था दी है— राज सभासद और मंत्री कैसे होने चाहिए? स्वराज्य, स्वदेश में उत्पन्न हुए, वेदादि शास्त्रों को जानने वाले शूरवीर, जिनके लक्ष्य अर्थात् विचार निष्फल न हों। ऐसे कुलीन सुपरीक्षित धार्मिक, चतुर सचित्रवान् सात या आठ नियुक्त किए जाएँ। आज की तरह फौज नहीं। सचिव अपने देश में उत्पन्न होना चाहिए।

महर्षि दयानन्द ने राजकार्यों के लिए कर लेने की व्यवस्था भी मनु महाराज के अनुसार इस प्रकार दी है— जो व्यापार करने वाले वा शिल्प को सुवर्ण और चाँदी का जितना लाभ हो, उसमें से पचासवाँ भाग, चावल आदि अन्नों में छठा, आठवाँ या बारहवाँ भाग लिया करें और जो धन लेवें तो इस प्रकार कि किसान आदि खाने पीने और धन से रहित होकर दुःख न पावें। महर्षि दयानन्द ने राजाओं की सेनाओं के रखरखाव तथा

राजपुरुषों के चयन और उनके नियमित अभ्यास आदि की भी व्यवस्था दी है। आज के राजपुरुषों को पेंशन मिलती है। यह व्यवस्था ऋषिवर ने अपने एक पत्र में राजा को परामर्श देते हुए लिखी थी कि जो राजपुरुष निरन्तर 30 वर्ष राजसेवा में रहें, उसे आजीवन आधा वेतन दिया जाए। यह विचारणा ऋषि के लोकहित की भावना को रूपायित करती है।

महर्षि दयानन्द ने अपने किसी भी ग्रन्थ में दलों के आधार पर चलने वाले प्रजातंत्र का जिक्र नहीं किया। वे सम्भवतः प्रजातंत्र की दल विहीन पद्धति को स्वीकार करते प्रतीत होते हैं। वे स्पष्टतः एक राष्ट्रीय सरकार के पक्षधर हैं जिसमें सभी विद्वज्जनों का प्रतिनिधित्व हो। वे राजा के लिए तीन या पाँच वर्ष की व्यवस्था भी नहीं देते। इससे तात्पर्य है कि लोकहित में राजकाज चलाने वालों का कार्यकाल दीर्घकालिक भी हो सकता है।

महर्षि दयानन्द से पहले किसी ने विश्व सरकार जैसे यू.एन.ओ. आदि संगठन की कल्पना भी नहीं की थी। परन्तु महर्षि दयानन्द के सत्यार्थप्रकाश के छोटे समुल्लास में लिखा है कि एक-एक ग्राम का अधिपति, दस ग्रामाधिपति को और वह दस ग्रामाधिपति, बीस ग्रामों के अधिपति को, दस-दस ग्रामों का वर्तमान नित्यप्रति जना देवे। और वे सब राज सभा, महाराज सभा अर्थात् सार्वभौम चक्रवर्ती महाराज सभा को सब भूगोल का वर्तमान जनाया करे।' महर्षि ने मनु महाराज के श्लोक की व्याख्या करते हुए निश्चय ही 'विश्व सरकार' की अवधारणा प्रस्तुत की है। ऐसी विचारणा देने वाले वे पहले राजनैतिक चिन्तक हैं। महर्षि दयानन्द के राजनीति सम्बन्धी विचार मौलिक हैं। वे विदेशी आक्रान्ताओं को शीघ्रातिशीघ्र भारत में उखाड़ फेंकना चाहते हैं और यहाँ पर वेदानुमोदित शासन सत्ता की स्थापना करना चाहते हैं। 'आर्याभिविनय' में अनेक मन्त्रों की व्याख्या करते समय उन्होंने यह प्रार्थना की है।

'राजप्रजाधर्म विषय' का समापन करते हुए वे लिखते हैं कि वे आर्य लोग सत्य न्याय करने में अत्यन्त पुरुषार्थ करते थे। जिससे आर्यावर्त के न्याय घर में कभी अन्याय नहीं होता था। यही सब आर्यों का सिद्धान्त है। मौलिक विचारक महर्षि दयानन्द सरस्वती के मन्तव्यों के अनुसार ऐसे ही आर्य राज्य की स्थापना आज की आवश्यकता है।

ए.एच-16, शालीमार बाग, दिल्ली

श्रद्धानन्द शूर अलबेला - II

-राजेन्द्र जिज्ञासु

कलकत्ता काँग्रेस में झगड़ा- स्वामी अभेदानन्द जी महाराज ने कोलकाता में हुए कांग्रेस अधिवेशन की एक घटना लिखी है कि वहाँ नेताओं की एक बैठक हो रही थी। उसी समय बाहर बंगाली व पंजाबी युवकों में बड़ा झगड़ा हो गया। कई बड़े-बड़े नेताओं ने उन्हें शान्त कराने का प्रयास किया। परन्तु कोई भी नहीं सुनता था। जब स्वामी जी को इस झगड़े की सूचना मिली तो लम्बी चौड़ी कायावाला वीर संन्यासी एकदम वहाँ पहुँचा। परिणाम की परवाह किये बिना दोनों पक्षों के बीच जाकर आपने हाथ उठाकर उन्हें जब शान्त होने को कहा तो तेजस्वी प्रतापी श्रद्धानन्द स्वामी जी को देखते ही दोनों पक्षों के युवक शान्त हो गये। जब सिर फूटने की आशंका से हर कोई मध्यस्थता से दूर-दूर रहता था तब इस तेजस्वी महात्मा ने अपनी मोहिनी मूर्ति से कुछ ऐसा प्रभाव डाला कि क्षण भर में वहाँ शान्ति हो गई।

पिंजरे में स्वामी जी - सिक्खों के जत्येदार बनकर आप गुरु के बाग के मोर्चे में चले गये। आपको किसी कोठरी में नहीं बल्कि पिंजरे में बंद किया गया। उस पिंजरे में आप टाँगें पसार कर सो भी नहीं सकते थे। तब अकाल तख्त पर भाषण देने के कारण आप बन्दी बनाए गए। मिर्यावाली जेल में सिक्खों के दीवान के पश्चात् सिक्ख नेता आशीर्वाद देने की आपसे सादर विनती किया करते थे। सिक्खों के संग्रहालय में उनका चित्र लगाने का ध्यान क्या भूले भटके सिक्ख नेताओं को कभी आएगा?

नेपोलियन की जीवनी :- भारतीयों के दिलों पर बैठी अंग्रेज लोगों की दहशत को भगाने के लिए आपने नेपोलियन बोनापार्ट के जीवन चरित छपवाने का निराला कार्य किया। कई राय बहादुरों व बाबुओं ने जली कटी सुनाई। परन्तु आपने अंग्रेजी राज के रोष की किञ्चित भी परवाह नहीं की। गोरे घातक को पकड़ लिया - महात्मा मुंशीराम ट्रेन में सो

रहे थे। दो गोरों ने आप पर आक्रमण कर दिया। न जाने उनका क्या प्रयोजन था। आप जागे और एक गोरे घातक को पकड़ लिया। किसी भारतीय नेता पर यह अपने ढंग का पहला आक्रमण था।

दलितोद्धार के लिए सत्याग्रह -भक्त धर्म सिंह को साथ लेकर आप केरल के वायुक्कुम नगर पहुँचे, दलितोद्धार व आपृश्यता निवारण के लिए। यह भारतीय इतिहास में एकमेव सत्याग्रह था। सहस्रों किलोमीटर दूर से वीर धर्म सिंह भी हरियाणा से जाकर आग में कूद पड़ा। स्वामी जी महाराज ने दो बार इस निमित्त दक्षिण के चारों प्रदेशों की वीर धर्म सिंह के साथ यात्राएँ की।

निर्भीक सुधारक :- बाल विधवाओं के पुनर्विवाह के लिए कर्नाटक के ज्ञानपीठ प्राप्तकर्ता श्री करंथ ने गाँधी जी को एक पत्र लिखा। गाँधी जी का उत्तर करंथ जी की आत्म कथा में पढ़िए। निराश होकर स्वामी जी को भी वही पत्र भेजा। निडर सुधारक स्वामी श्रद्धानन्द जी ने तुरन्त पत्रोत्तर भिजवाकर कहा कि जो भी विधवा पुनर्विवाह करना चाहे उसे सहयोग मिलना चाहिए। क्रान्तिकारियों के रक्षक समर्थक :- गाँधी जी ने हुतात्मा भक्त सिंह व बी. के. दत्त की असैम्बली बम काण्ड के लिए घोर निन्दा की और काकोरी के क्रान्तिवीरों के सम्मान का गाँधी जी ने विरोध किया। स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज उन्हें निर्भीक देशभक्त बलिदानी घोषित करते थे। 'तेज' की पुरानी फाइलों में इस केस के समाचार को पढ़ कर, हमारा हृदय गद्गद हो जाता है। साक्षी (Approver) गोसांई को आपने महा अधम विश्वासघाती तक लिखा। चाँदनी चौक में नंगी संगीनों के सामने सीना अड़ाने वाले स्वामी श्रद्धानन्द की तुलना किस की वीरता से की जावे? ला. लाजपतराय जी के सब मित्र उनका 1907 में साथ छोड़ गए। उनकी सगी भतीजी के विवाह में लाहौर से एक भी व्यक्ति (पुराना साथी संगी) जगरावाँ न पहुँचा। निर्भीक वीर महात्मा मुंशी राम ने तब डटकर लाला लाजपतराय का पक्ष लेकर शासकों की चुनौती स्वीकार की।

वेद सदन, अबोहर-252116

आज के सन्दर्भ में श्री राम

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम भारतीय संस्कृति के जाज्वल्यमान नक्षत्र हैं। वाल्मीकि रामायण में श्रीराम का उज्ज्वल चरित्र वर्णित है। वाल्मीकि के राम इस संसार के वास्तविक चरित्र लगते हैं। कालान्तर में अनेक कवियों एवं लेखकों ने उनके जीवनचरित्र मनमाने ढंग से लिखकर ऐसे गल्प जोड़ दिए कि श्रीराम एक काल्पनिक चरित्र लगने लगे। जिस प्रकार श्रीकृष्ण जैसे महान् योगी को राम ही नहीं रामायण के अन्य पात्रों के साथ इन कवियों-लेखकों तथा अन्धभक्तों द्वारा बड़ा भारी अन्याय किया गया है। चाहे वह दशरथ हों, कौशल्या, केकयी, सुमित्रा, सीता, लक्ष्मण, भरत, बाली, सुग्रीव, हनुमान या रावण और विभीषण ही क्यों न हों।

राम को सब कुछ ज्ञात था। वे तो मात्र लीला कर रहे थे। इससे बड़ा उपहास और भला क्या होगा? रावण को भी सब कुछ पता था तथा उसने तो राम के हाथों मरने के लिए ही सीता का अपहरण किया। इन कपोल कल्पित बातों से राम, सीता और रावण के चरित्रों को शून्य बना दिया गया। वीर हनुमान, बाली, सुग्रीव तथा तारा आदि पात्रों की भी बहुत दुर्गति की गई है। इन योग्य, ज्ञानवान वीरों को मात्र उछलने-कूदने वाले बन्दर कहना कहाँ तक उचित है? सम्पति और जटायु जैसे तपस्वियों को गिद्ध जैसा एक पक्षी वर्णित करना कहाँ तक न्यायसंगत हैं? अपने पूर्वजों के आदर्श जीवन को मलिन करने वाले ये कवि और लेखक तो दोषी हैं ही, उनसे भी बड़े दोषी वे अन्धभक्त हैं जो इन बातों पर विश्वास करके पाप के भागी बनते हैं। इस मनोरंजन प्रधान युग में रामलीलाओं के रूप में राम और रामायण के अन्य पात्रों के साथ कितना बड़ा छल किया गया है और अपने इतिहास तथा महापुरुषों को कैसे-कैसे कलंकित किया गया है। रामायण के सभी पात्रों को सही ढंग से प्रस्तुत करने का यह बड़ा ही अच्छा अवसर था। परन्तु इसमें तो मनोरंजन के दृष्टिकोण को सामने रखकर और भी इधर-उधर की सामग्री

मिला दी गई। इतिहास की रक्षा करने के स्थान पर उसे परिवर्तित करके दूषित कर देना एक ऐसा अपराध है जिसका कोई प्रायश्चित्त नहीं क्योंकि आने वाली पीढ़ियाँ उस पाप के बोझ तले दबकर समाप्त हो जाती हैं। मगर आज यह पाप हर कोई कर रहा है। टी.वी. के इस रामायण में सही इतिहास के परिप्रेक्ष्य में राम और अन्य पात्रों को दिखाकर बड़ा भारी उपकार किया जा सकता था। परन्तु इसमें भी हनुमान, सुग्रीव, बाली आदि को बड़ी-बड़ी पूँछें लगाकर दिखाया जाता रहा है, मगर उनकी पत्नियों के पूँछ नहीं। यह कैसी करामात है कि बन्दरों के तो पूँछ हैं मगर बन्दरियों के नहीं? यह प्रश्न हर बड़े-बूढ़े के जेहन में दृढ़ता के साथ कुलबुला रहा है। परन्तु आत्मा की आवाज को दबाकर सब देखते और दिखाते चले जा रहे हैं। इस सच्चाई से भी आँखें बन्द की जा रही हैं कि ये असम्भाव्य घटनाएँ धीरे-धीरे राम के अस्तित्व को ही समाप्त कर देंगी। यह कारण है कि राम और रामायण को एक काल्पनिक गाथामात्र घोषित करने का दुष्प्रयास किया जा रहा है। वास्तव में रामायण वाल्मीकि द्वारा रचित एक जीवनचरित्र है। इसके नायक भगवान श्रीराम किसी कल्पना लोक के पात्र नहीं बल्कि 'रघुकुल' के एक महाराजा थे। आदिकालीन मनु के सात पुत्र थे जिनकी एक शाखा में भगीरथ, अंशुमान, दिलीप और रघु आदि हुए और दूसरी शाखा में सत्यवादी हरिश्चन्द्र आदि। वैवस्वत मनु के इसी वंश का नाम आगे चलकर सूर्यवंश हुआ जिसमें श्रीराम ने अयोध्या में जन्म लिया। वे वीर, धीर और सर्वमर्यादाओं से विभूषित थे। मूलरूप में वे एक नीतिवान, आदर्शवादी, दयालु, न्यायकारी और कुशल महाराजा थे। बाकी समस्त गुण तो उनके पीछे-पीछे अनुसरण करते थे। वे मात्र धार्मिक नेता या महापुरुष नहीं थे। बल्कि धर्म तो उनके जीवन के एक-एक कार्यकलाप से स्वयं झलकता था। वैदिक धर्म से विभूषित आर्य पुरुष श्रीराम इतने कुशल राजा थे कि इनके राज्य को एक आदर्श राज्य माना गया है।

भगवान श्रीराम का सम्पूर्ण जीवन वेदमय था। कुछ वैदिक शब्द राम के जीवनों में पूरी तरह से लागू होते हैं। उनमें से

एक शब्द सामवेद मंत्र 185 में आया मित्र है। मित्र का अर्थ है जिसका स्नेह प्रत्येक प्रकार से त्राण करने वाला होता है। ऐसे महापुरुष अपने सम्पर्क में आने वालों को बुराई से बचाते हैं और उनके सद्गुणों की प्रशंसा करते हैं। संकट आने पर इनके प्रत्युपकारों में प्राणपन तक सहायता करते हैं और आवश्यकता पड़ने पर तो सब कुछ दे देते हैं। राम की इस प्रकार मित्रता का उदाहरण सुग्रीव के साथ मिलता है। राम सुग्रीव को कितना प्रेम करते थे तथा उसकी सुरक्षा का उनको कितना ध्यान रहता था, यह लंका में युद्ध की तैयारी के समय की एक छोटी सी घटना से स्पष्ट हो जाता है। समुद्र पार करके वानर सेना जब लंका में पहुँची तो राम सुग्रीव के साथ सुमेरु पर्वत पर खड़े कुछ निरीक्षण कर रहे थे कि पल भर में देखते ही सुग्रीव पहाड़ से छलांग मारकर रावण के पास जा पहुँचा और कुछ जली-कटी सुनाकर रावण के साथ तीन-पाँच कर रहा था तो आर्यपुत्र राम को बड़ी घबराहट हो रही थी तथा नाना प्रकार के विचार उनके मन को चिंतित कर रहे थे, परन्तु ज्यों ही सुग्रीव वापस सुमेरु पर्वत पर राम के पास आया तो राम ने कहा-

असम्पन्त्र्य मया सार्धं यदिदं साहसं कृतम्।

एवं साहसकर्माणि न कुर्वन्ति जनेश्वराः॥

प्यारे सुग्रीव, मेरे साथ परामर्श किये बिना तुमने जो यह साहसिक कार्य किया है, इस प्रकार का साहस राजा लोगों का करना उचित नहीं है।

यदि किन्हीं कारणों से तुम वापस आने में असमर्थ होते तो मैंने निश्चय कर लिया था कि युद्ध में रावण को परिवार और सेना सहित मारकर विभीषण का लंका में राजतिलक करके और अयोध्या का राज्य भरत को सौंपकर मैं अपना शरीर त्याग देता।

इसी प्रकार विभीषण के साथ भी मर्यादा पुरुषोत्तम की आत्मीयता थी। लंका में युद्ध में मेघनाद के द्वारा वीर लक्ष्मण के आहत और मूर्च्छित होने पर राम ने जहाँ और अधूरे काम को देखकर खिन्नता प्रकट की तो वहाँ विभीषण को दिये

वचन का पूर्ण न होना उन्हें (राम जी) सबसे अधिक खटक रहा था। विभीषण का ध्यान कर उन्होंने कहा -यन्मया न कृतो राजा लंकायां हि विभीषणः। अर्थात् मैं लंका का राज्य विभीषण को न दे सका, इसका मुझे बहुत खेद है। ऐसे मित्र भला आज कहाँ मिलेंगे। आज तो पेट में छुरा घोंपने वाले मित्र रूप में शत्रु चहुँ ओर विचरण करते दीख पड़ते हैं। भगवान श्रीराम नीतिमान, पारखी और अपनी दूरदर्शिता से चुटकियों में विषम परिस्थितियों को सुलझाने में बड़े कुशल थे। रामचन्द्र जी बड़े पारखी भी थे और शरणागत को निर्भयता भी प्रदान कर दिया करते थे। जब रावण ने अपने भाई विभीषण द्वारा कही सीता जी को आदरपूर्वक लौटाने की बात न मानी तो रावण से अपमानित होकर जब विभीषण राम के दल में राम से मिलने आये तो रामचन्द्र जी को छोड़कर शेष सबका यही मत था कि यह शत्रु का भाई है। अतः इसका कुछ भी विश्वास न करना चाहिए। बड़े तर्क-वितर्क के बाद राम ने विभीषण से अभिवादन करने के बारे में कहा..... मनुष्य अपने आकार को छिपाने की कोशिश करने पर भी नहीं छिपा सकता क्योंकि अन्दर के विचार बलपूर्वक आकर आकृति पर प्रकट होते रहते हैं। अतः राम ने विभीषण का स्वागत करके उसको लंकेश कहकर, उसके भावों को जाना और आगे चलकर शत्रु के इसी भाई ने राम की पूरी सहायता की। गीता के शब्दों में 'समत्वं योग उच्यते' के अनुसार रामचन्द्र पूरे योगी थे। हर्ष-विषाद में वह एक समान रहते थे। राज्याभिषेक का समाचार पाकर वह फूलकर कुप्पा नहीं हुए और वन जाने की आज्ञा पाकर किसी तरह के विषाद के कारण उनकी आकृति पर कोई विकार नहीं आया। यह तो सर्वविदित है कि वह कितने महान् आज्ञाकारी पुत्र थे और भाई भरत से तथा माता कैकेयी से भी कितना प्रेम करते थे। एक प्रसंग में राम ने कहा कि मैं अपने भाई भरत के लिए हर्षपूर्वक सीता, राज्य, प्राप्य, इष्ट पदार्थ एवं धन सब

कुछ स्वयं ही दे सकता हूँ। फिर राजा के कहने पर और तुम्हारा (कैकेयी) प्रिय करने के लिए तो क्यों नहीं दूँगा। यही नहीं कैकेयी को राम ने यह भी कहा कि मैं पिता जी की आज्ञा से अग्नि में भी प्रवेश कर सकता हूँ और समुद्र में कूद सकता हूँ। राम एक बात कहकर दूसरी बात कभी नहीं कहा करता।

श्रीराम प्रजा को पुत्र समान प्यार करते थे और प्रजाजन भी उनको पिता से भी अधिक पालन-पोषण करने वाले मानते थे। उनके राज्य की विशेषताएँ महर्षि वाल्मीकि तथा सन्त तुलसीदास जी ने बड़े मनोहर भाव भरे शब्दों में वर्णित की हैं। यही कारण था कि महात्मा गाँधी स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में भी रामराज्य-सा राज्य स्थापित करने का स्वप्न देखते थे। परन्तु दुःख है कि कालान्तर में कुछ लोगों की स्वार्थपरता के कारण वह स्वप्नमात्र ही रह गया।

आज देश विघटन और अराजकता, नेताओं की स्वार्थपरता तथा भ्रष्टाचार के गहरे खड्डे में जा पड़ा है। मानवता दानवता में बदल गई है। लोग रावण, हिरण्यकश्यपु और अराष्ट्रवादी बने हुए हैं। देश हितैषी तथा प्रजाजनों का हितचिन्तक खोज पाना कठिन है।

ऐसे विकट समय में मातृभूमि और जनता की भलाई व रक्षा के लिए राम जैसे महान् योद्धा और नीतिनिपुण तथा परोपकारी शासक नेता की नितान्त आवश्यकता है। अतः हमें गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिए कि हम अपने ध्येय से कितने नीचे चले गए हैं और अभी भी जा रहे हैं। हमें राम के जीवन अनुकूल अपना आचरण बनाना चाहिए। केवल जुलूसों, कीर्तनों, जलसों और भाव भरे भाषणों से काम चलने वाला नहीं है। ठोस कदम उठाकर तथा सक्रिय होकर ही हम देश के नैतिक मूल्यों की रक्षा कर सकते हैं। यही समय जागरूक होकर अन्तर्राष्ट्रीय दूषित वृत्तियों का साहसपूर्वक सामना करके उनको और उभरने से रोकना चाहिए।

दिव्ययुग से साभार

कश्मीर नरेश और भाई परमानंद

अण्डमान (कालापानी) की जेल में वीर सावरकर आदि के साथ घोर यातनाएँ सहन करने के बाद महान् इतिहासकार देवतास्वरूप भाई परमानंद जी लाहौर लौटे तो बहुत दुबले-पतले हो चुके थे। चिकित्सक के परामर्श पर वे कुछ दिन के लिए श्रीनगर गए। भाई जी आर्यसमाजी थे। कश्मीर के महाराजा प्रतापसिंह उनकी ख्याति से सुपरिचित थे। वे सनातन धर्मसभा के संरक्षक थे। महाराजा ने भाई जी को सनातन धर्मसभा के महोत्सव में आमंत्रित किया। भाई जी समारोह में पधारे तथा उनका विद्वतापूर्ण व्याख्यान सुनकर महाराजा गद्गद् हो उठे।

महाराजा प्रतापसिंह ने मंच पर ही उनकी प्रशंसा करते हुए कहा कि मैं तथा राज्य की जनता मातृभूमि के लिए कालापानी में कष्ट उठाने वाले महान् क्रान्तिकारी के दर्शनों से धन्य हो गई है। उसी शाम कश्मीर के अंग्रेज गवर्नर ने महाराजा को फोन कर ब्रिटिश शासन के एक जाने-माने विद्रोही का अभिनन्दन किए जाने पर नाराजगी जताई।

भाई जी को दूसरे दिन जब इस बात का पता चला तो उन्होंने एक पत्र महाराजा के पास भेजा जिसमें उनके कारण हुए महाराजा के अपमान पर दुःख व्यक्त किया गया था तथा लिखा था कि वे कश्मीर छोड़कर लाहौर लौट रहे हैं। महाराजा ने जैसे ही पत्र पढ़ा कि भाई जी की महानता की अनुभूति कर उनकी आँखें नम हो गईं।

शिव कुमार गोयल

आधी शताब्दी के बाद सरदार पटेल

(जन्मतिथि 31 अक्टूबर एकता दिवस के रूप में)

-डॉ. रवीन्द्रकुमार, मेरठ

अपने परलोकगमन की आधी शताब्दी से भी अधिक बीत जाने के बाद भारत के सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्रों में भी सरदार वल्लभभाई पटेल जिस प्रकार चर्चा का विषय हैं, वह अस्वाभाविक नहीं है। भारतीय समाज और राष्ट्र के लिए जो अद्वितीय और चिरकाल तक स्मरणीय रहने वाली उपलब्धियाँ उन्होंने हासिल कीं, यह सब उसी का परिणाम है। आज उन्हें जहाँ एक ओर अपने समय का पूर्ण व्यावहारिक पुरुष स्वीकार किया जाता है तो वहीं दूसरी ओर उनको अपने समकालीन राष्ट्रीय नेताओं में प्रमुख कारगर सोच रखनेवाला राजनीतिज्ञ माना जाता है।

बिखरी हुई तथा असमान स्थितिवाली 556 देशी रियासतों को सरदार पटेल ने अल्पावधि में एवं सम्यक् ढंग से भारतीय संघ में मिलाया। यह सरल ही नहीं बहुत बड़ा कार्य था। भारत के हजारों वर्ष के इतिहास में ऐसे एकीकरण और स्थायित्व का कार्य पहले कभी नहीं हुआ। इसीलिए प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने कहा था- “सैकड़ों राज्यों को भारतीय संघ में सम्मिलित करने के लिए उन्होंने जो कुछ भी किया, इतने बड़े कार्य का उदाहरण न तो हमारे देश के इतिहास में है और न ही किसी दूसरे देश के इतिहास में है।”

भारत की राजनीतिक एकता के निर्माण के अतिरिक्त सरदार पटेल ने देश के विभाजन के समय जनसंख्या की अदला-बदली से उत्पन्न गम्भीर समस्या, कानून और व्यवस्था को बनाए रखने की समस्या एवं तत्कालीन प्रशासन व नौकरशाही के भारतीयकरण के लिए राहत व पुनर्वास के बड़े काम के साथ ही भारतीय प्रशासनिक और पुलिस सेवाओं का गठन सरदार पटेल ने किया और संविधान निर्माण करने वाली सभा में मूल अधिकारों से संबंधित समिति सहित कई दूसरी समितियों के

प्रमुख के रूप में कार्य करते हुए अपना अविस्मरणीय योगदान दिया।

सरदार पटेल के कार्य वास्तव में इतने बड़े थे कि कोई व्यक्ति सामान्यतः उन्हें अपने एक ही जन्म में पूर्ण नहीं कर सकता है। वल्लभभाई ने तो इतने सारे कार्यों को बखूबी किया, यह सत्य है। उनकी जैसी विभूति हजारों वर्ष में एक बार पैदा होती है, यह भी सत्य है।

वर्तमान पीढ़ी को यह जानना चाहिए कि सरदार पटेल एक साथ कई समस्याओं को कैसे सुलझा सके थे तथा अनेक बड़े कार्यों को वे किस प्रकार कर सके थे। मैं बताना चाहूँगा कि ऐसा वे इस कारण से कर सके थे कि उनमें समस्या के मूल को समझने की शक्ति थी और साथ ही समस्या के समाधान के लिए निर्णय लेने की उनमें क्षमता थी। वे कार्य के लिए निर्णय कर लेने के बाद कार्यान्वित करना भी अपना धर्म मानते थे। ऐसा करने की उनके पास विशेष कला भी थी। हर किसी कार्य को सरदार पटेल स्वयं ही पूरा कर लेते थे, ऐसी बात नहीं थी। ऐसा हो भी नहीं सकता था। उनके अनेक साथी, सहयोगी और अधीनस्थ, कार्यों को पूरा कराने में उनका पूरा-पूरा साथ देते थे। सरदार पटेल अपने साथियों तथा सहकार्यकर्ताओं में विश्वास का निरन्तर संचार करते रहते थे, वे उन्हें हिम्मत देते रहते थे। कार्य में सफलता का यह बहुत बड़ा आधार था। पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने इसी कारण सरदार के प्रति श्रद्धांजलि प्रकट करते हुए संसद में कहा था— “वे एक ऐसे व्यक्ति थे, जिन्होंने संकटकाल में तथा विजय की वेला में सदा ही ठोस और उचित परामर्श दिया। वह एक ऐसे मित्र, सहयोगी और साथी थे, जिन पर निर्विवाद रूप से शक्ति की ऐसी मीनार के रूप में भरोसा किया जा सकता था, जिसने हमारे संकट के दिनों में द्विविधा में पड़े हुए हमारे हृदयों को पुनः शक्ति प्रदान की।”

किसी कार्य को करने का निर्णय सरदार पटेल शुद्ध राष्ट्रीय

हित को सामने रखकर ही करते थे। राष्ट्रहित भी दीर्घकालिक हो, इस बात का वे विशेष रूप से ध्यान रखते थे। ठीक यही मापदण्ड किसी समस्या के समाधान के समय उनका होता था। यही कारण था कि साथी-सहयोगी व कार्यकर्ता उनके साथ जुड़े रहते थे। ऐसे में कठिन से कठिन प्रतीत होने वाला कार्य भी कभी-कभी सरलता से हो जाता था।

सरदार वल्लभभाई पटेल बहुमुखी प्रतिभा से सम्पन्न व्यक्ति थे। उनके पदचिह्नों पर चलने के अनेक दावे किए जा सकते हैं। उनके जैसा बनने की बातें भी की जा सकती हैं। लेकिन इस सबसे पहले उनके त्याग से भरे जीवन, उनमें मौजूद दृढ़ निश्चयवृत्ति और उनके कार्यों से बहुत कुछ सीखने की आवश्यकता होगी। फिर देश की एकता और अखण्डता को बनाए रखने के लिए उनकी कार्यपद्धति और उनके जैसी व्यावहारिक तथा वास्तविक सोच को अपनाने की आवश्यकता होगी।

लोक शिक्षक से साभार

BRAHMASHA INDI A VEDIC RESEARCH FOUNDATION ACKNOWLEDGES WITH THANKS RECEIPT OF THE FOLLOWING DONATIONS:-

1. Ms. Uma Monga, C2B/92C, Janakpuri, New Delhi-110058
Rs. 1100/-
2. Sh. K.C. Gupta, C8/8045, Vasant Kunj, New Delhi-110070
Rs. 500/-

Donations to the Foundation are eligible for Tax Exemption under Section 80G of the Income Tax Act 1960 Vide No.DIT(E)1/3313/DELBE 21670-2503210 dated 25.03.2010

Brahmarpan is sorry to record sad demise of Dr. J.N.Nanda, Vasant Kunj, New Delhi. He was an esteemed contributor to our journal who had held office of Director of Defence Labouratory at Kanpur ; also served as Exec. secy. at INSA. He was a multi-faced personality. He published various books & articles in the field of science & technology. He also authored a book on Punjab Culture and at the fag end of his life in late ninteens, he was engaged in writing a book 'The Story of Hindu Civilization' and shared a part of its manuscript with us. Brahmarpan pays a homage to the depated soul.

मिसाइल मैन कलाम का स्मरण

(जन्मदिन पर पेश हैं उनकी सादगी
से जुड़े तीन किस्से)

1. जब आए मेहमान - एक बार कलाम के कुछ रिश्तेदार उनसे मिलने राष्ट्रपति भवन आए। कुल 50-60 लोग थे। उनके आने-जाने और रहने-खाने का सारा खर्च कलाम ने अपनी जेब से दिया। साफ निर्देश था कि इन मेहमानों के लिए राष्ट्रपति भवन की कारें इस्तेमाल नहीं की जाएंगी। रिश्तेदारों के राष्ट्रपति भवन में रहने और खाने-पीने के सारे खर्च का ब्यौरा अलग से रखा जाएगा और इसका भुगतान राष्ट्रपति के नहीं बल्कि कलाम के निजी खाते से होगा। एक हफ्ते में इन रिश्तेदारों पर हुआ 3 लाख 54 हजार 924 रुपये का कुल खर्च अब्दुल कलाम ने भरा था।

2. कुर्सी का चक्कर - एक बार कलाम साब आई आई टी (बीएचयू) के दीक्षांत समारोह में चीफ गेस्ट बनकर गए। वहाँ मंच पर जाकर उन्होंने देखा कि जो 5 कुर्सियाँ रखी गई हैं उनमें एक कुर्सी का साइज बाकी कुर्सियों से काफी बड़ा है। यह कुर्सी राष्ट्रपति के लिए ही थी और यही इसके बड़ा होने का कारण भी था। कलाम ने इस कुर्सी पर बैठने से मना कर दिया। उन्होंने वाइस चांसलर (वीसी) से उस कुर्सी पर बैठने का अनुरोध किया। वीसी भला ऐसा कैसे कर सकते थे? अब्दुल कलाम साब के लिए फौरन दूसरी कुर्सी मँगवाई गई जो साइज में बाकी कुर्सियों जैसी ही थी।

3. कलाम के दोस्त - जब राष्ट्रपति बनने के बाद वह पहली बार करल गए। उनके ठहरने का इंतजाम राजभवन में था। वहाँ उनके पास आने वाला सबसे पहला मेहमान सड़क पर बैठने वाला एक मोची और एक छोटे-से होटल का मालिक था। एक वैज्ञानिक के तौर पर कलाम ने तिरुवनंतपुरम में काफी वक्त बिताया था। इस मोची ने कई बार उनके जूते गाँठे थे और उस छोटे-से होटल से कलाम ने कई बार खाना खाया था।

भ्रान्ति-निवारण

(विजयादशमी और दीपावली के सम्बन्ध में)

-पं. नन्दलाल निर्भय

विजयादशमी और दीपावली जैसे प्राचीन आर्य पर्व भी पौराणिक हिन्दू सम्प्रदायों के कुप्रभावों से अन्य पर्वों की भांति न बच सके और कालान्तर में उनका कुछ से कुछ रूप हो गया। इस पर्व का रावण-वध से कोई सम्बन्ध नहीं है-जैसा कि वैष्णव सम्प्रदायों ने हिन्दुओं में भ्रान्ति फैला रखी है। इस अवसर पर खेले जाने वाले रामलीला नाटक और विजयादशमी के दिन रावण का पुतला बनाकर उसे जलाने से तो यह भ्रान्ति सर्वसाधारण में और भी बद्धमूल हो गई।

अभी एक लेख श्री बाबूलाल जी भूतपूर्व संचालक शिक्षा विभाग, मध्य भारत का 'टंकारा' पत्रिका में प्रकाशित हुआ था। उक्त विद्वान लेखक ने वाल्मिकीय रामायण का गहन अध्ययन किया है। उसी के आधार पर अनेक प्रमाण प्रस्तुत करके उन्होंने सिद्ध किया है कि विजयादशमी और दीपावली का रावणवध और रामाभिषेक से दूर का भी सम्बन्ध नहीं है। उसे ही यहाँ संक्षिप्त रूप में दिया जा रहा है।

राजा दशरथ ने चैत्र मास में राम का राज्याभिषेक करने का निश्चय किया।

“चैत्रः श्रीमान्यं मासं पुण्यः पुष्पितकाननः।

यौवराज्याय रामस्य सर्वमेवोपकल्पताम्॥” (अ. श्लो. 25)

अर्थात् शोभावाला चैत्र मास फूले हुए वनों वाला है। राम के यौवराज्य के लिए सब सामग्री इकट्ठी की जाए।

परन्तु कैकेयी के दुराग्रह के कारण राम को चौदह वर्ष के लिए वन जाना पड़ा। राम ने पिता की आज्ञा को शिरोधार्य करके उसी दिन वन जाने का निश्चय किया और पिता के आग्रह करने पर भी उन्होंने एक रात भी न रुकने के लिए क्षमा चाही। राम के वनगमन के पश्चात् भरत उनके पास चित्रकुट गए और अयोध्या लौटने का आग्रह किया। उसे

अस्वीकार करने पर भरत ने राम से कहा कि चौदह वर्ष तक आपकी प्रतीक्षा करूँगा। चौदह वर्ष के अंतिम दिन समाप्त होने पर यदि आपको नहीं देखूँगा तो अग्नि में प्रवेश करके जीवित ही मरूँगा। राम ने इसे स्वीकार कर लिया। वनवास के तेरहवें वर्ष की समाप्ति पर रावण ने सीता हरण किया और सीता को खोजते हुए राम की सुग्रीव, हनुमान से भेंट हुई। बालिवध और सुग्रीव के राज्याभिषेक के पश्चात् श्रावण से कार्तिक तक वर्षा ऋतु की समाप्ति की प्रतीक्षा की गई। तत्पश्चात् हनुमान सीता की खोज करने लंका गए। सिद्ध है कि सीताहरण हेमन्त ऋतु अथवा वसन्त ऋतु के प्रारम्भ से ही हुआ।

सीताहरण के पश्चात् रावण ने सीता को अपनी कामवासना की तृप्ति में बाधक पाया तो उसने कहा-हे मैथिलि! मेरी बात सुन बारह मास के समय में हे सुन्दरी यदि तू मुझे नहीं चाहेगी तो मेरे रसोइए तुझे प्रातराश के लिए टुकड़े-टुकड़े कर देंगे। इस प्रकार वनवास के चौदहवें वर्ष में वर्षा की समाप्ति पर सीता की खोज प्रारंभ हुई और हनुमान जब सीता से लंका में मिले उस समय रावण द्वारा सीता को दी गई एक वर्ष की अवधि में दो मास शेष थे और दस मास व्यतीत हो चुके थे। रावण ने सीता से कहा जो समय मैंने तुझे दिया था उसमें अब केवल दो मास शेष हैं, उसके पश्चात् तुझे मेरी शैया पर सोना होगा। अन्यथा मेरे रसोइए तेरे टुकड़े-टुकड़े करके मेरा प्रातराश बना देंगे। सीता ने हनुमान से कहा कि राम से कहो कि शीघ्रता करें जब तक यह वर्ष समाप्त नहीं होता मेरा जीवन है। यह दसवाँ मास चल रहा है। केवल दो मास शेष हैं जो दुर्जन रावण ने मेरी अवधि नियत की है।

हनुमान ने लंका से लौटकर यह सब वृत्तांत राम को सुना दिया। राम ने कहा कि यदि सीता एक मास तक और जीवित रही तो वीरो! वह चिरकाल तक जीवित रहेगी। तत्पश्चात् राम ने लंका पर आक्रमण किया और रावण से युद्ध किया।

जब मेघनाद युद्ध में मारा गया तो रावण को बड़ा क्रोध आया और वह सीता को मारने के लिए उद्यत हो गया परन्तु उसके सुपाश्व ने ऐसा न करने का परामर्श देते हुए कहा— आज कृष्णपक्ष की चतुर्दशी है, आज तैयारी करके कल अमावस्या में सेना सहित विजय हेतु चढ़ाई करके आप दशरथ-पुत्र राम को मारकर सीता को प्राप्त कर लें। इससे स्पष्ट है कि रावण और राम का अन्तिम युद्ध अमावस्या को हुआ और रावण मारा गया।

युद्ध की समाप्ति पर विभीषण ने राम से प्रार्थना की कि आप कुछ दिन यहाँ ठहरें। किन्तु राम ने इसे अस्वीकार करते हुए कहा कि भरत से मैं प्रतिज्ञा कर चुका हूँ कि चौदह वर्ष समाप्त होने पर अयोध्या लौट आऊँगा। अतः तुम पुष्पक विमान अभी मँगाओ। मैं रुक नहीं सकता और राम ने लक्ष्मण और सीता सहित अयोध्या को तुरन्त प्रस्थान किया। जैसा कि पूर्व लिखा जा चुका है। राम का राज्याभिषेक न होकर वन-गमन चैत्र मास में हुआ था। अतएव चौदह वर्ष की समाप्ति इसी चैत्र मास में हो रही थी तथा भरत और राम दोनों की परस्पर प्रतिज्ञानुसार राम को इसी अवधि में ही अयोध्या लौटना था। इससे यह स्पष्ट है कि रावण-वध की अमावस्या चैत्र मास की ही थी अन्य नहीं। विभीषण का उपर्युक्त आग्रह और राम द्वारा उसकी अस्वीकृति इसकी सम्पुष्टि करते हैं कि चैत्र मास की समाप्ति को दृष्टि में रखते हुए उन्होंने वायुयान द्वारा अयोध्या लौटने को शीघ्रता की। इन सभी प्रमाणों से जो राम की अधिकृत जीवनी वाल्मीकि रामायण में है, यह निर्विवाद रूप से सिद्ध है कि रावण-वध की तिथि विजयादशमी अश्विन मास की न होकर चैत्र की अमावस्या है। यह सिद्ध हो जाने पर कार्तिकीय दीपावली का राम के वन से लौटने अथवा राज्याभिषेक का दिवस मनाने का कोई आधार ही नहीं रहता। राम की समस्त जीवन गाथाओं का आधार वाल्मीकीय रामायण हैं। इसमें

किसी प्रकार का विवाद नहीं हो सकता। तब अन्य ग्रन्थों की उसके विरुद्ध कल्पित गाथाओं और किंवदन्तियों का क्या मूल्य?

परन्तु यह सब होते हुए भी दुःख इस बात का है कि कुछ आर्य लेखक भी इन पौराणिक मिथ्या ग्रन्थों के आधार पर अब भी विजयादशमी को ही रावण-वध की तिथि मान रहे हैं और हरिभक्त-विलास जैसे कल्पित ग्रन्थों पर विश्वास करके उसके प्रमाण अपनी सम्पुष्टि में देते हैं।

वाल्मीकीय रामायण से इस विजयादशमी की राम से पूर्व परम्परा का एक अन्य प्रमाण मिलता है जिसे सभी विचारवान स्वीकार करते हैं। वर्षा ऋतु के समाप्त होने पर राम ने लक्ष्मण को सीता की खोज के लिए सुग्रीव को प्रेरित करने पम्पापुर भेजते हुए कहा-

हे नृपात्मज! परस्पर वैरबद्ध जय के अभिलाषी राजाओं के उद्योग का समय उपस्थित हुआ है।

श्री मीर जी ने अपनी दशहरा नामक कविता में लिखा है-
था यही दिन जब यहाँ श्रीराम ने दल साजकर।

गिरि प्रवर्षण से चढ़ाई की थी लंका राज पर॥

इससे यह सिद्ध होता है कि परस्पर वैरबद्ध राजा विजयादशमी के दिन युद्ध के लिए यात्रा करते थे और यह पर्व क्षत्रियों द्वारा इस रूप में मनाया जाता था।

इसी प्रकार दीपावली को शारदीय नवसस्येष्टि यज्ञ के अतिरिक्त वैश्य वर्ग द्वारा व्यापार के लिए विदेश गमन के लिए हो सकता है। विजयादशमी को निरीह पशुओं की लाखों की संख्या में देवी-देवताओं पर बलि और दीपावली की रात्रि लक्ष्मी आदि की मूर्तिपूजा और जुआ खेलने की प्रथा पौराणिक ग्रन्थों की देन है।



रानी दुर्गावती ने वीरमरण स्वीकार किया

-संदीप पत्रे

शत-शत नमन् ज्वालारूपी रानी दुर्गावती को जिनका हत्यारा था वह अकबर जिसे साजिशान बना दिया गया महान्!

अकबर की महानता के गुण गाने वालों को आज पता भी नहीं होगा कि जिन्होंने आजादी, शौर्य, वीरता और बलिदान को केवल दो या चार परिवारों के आस-पास, इर्द-गिर्द घुमा कर रख दिया है। इस भारत भूमि ने आजादी और धर्म की रक्षा के लिए बहुत से बलिदान दिए हैं। उनमें महान् रानी दुर्गावती जी का।

महान रानी दुर्गावती जी का जन्म 5 अक्टूबर सन् 1524 को महोबा में हुआ था। दुर्गावती के पिता महोबा के राजा थे। रानी दुर्गावती सुन्दर, सुशील, विनम्र, योग्य एवं साहसी लड़की थी। बचपन में ही उसे वीरतापूर्ण एवं साहस भरी कहानियाँ सुनना व पढ़ना अच्छा लगता था। पढ़ाई के साथ-साथ दुर्गावती ने घोड़े पर चढ़ना, तीर-तलवार चलाना अच्छी तरह सीख लिया था। शिकार खेलना उसका शौक था। वे अपने पिता के साथ शिकार खेलने जाया करती थीं। पिता के साथ शासन का कार्य भी देखती थीं।

विवाह योग्य अवस्था प्राप्त करने पर उनके पिता मालवा नरेश ने राजपूताने के राजकुमारों में से योग्य वर की तलाश की। परन्तु दुर्गावती गोंडवाना के राजा दलपतिशाह की वीरता पर मुग्ध थी। इस प्रकार दुर्गावती और दलपति शाह का विवाह हुआ। रानी दुर्गावती अपने पति के साथ गढ़मंडल में सुखपूर्वक रहने लगी। इसी बीच दुर्गावती के पिता की मृत्यु हो गई और महोबा तथा कालिंजर पर मुगल सम्राट् अकबर का अधिकार हो गया।

विवाह के एक वर्ष पश्चात् दुर्गावती को एक पुत्र हुआ। जिसका नाम वीर नारायण रखा गया। जिस समय वीरनारायण केवल तीन वर्ष का था उसके पिता दलपति शाह की मृत्यु हो गई। दुर्गावती के ऊपर तो मानों दुखों का पहाड़ ही टूट पड़ा। परन्तु उसने बड़े धैर्य और साहस के साथ इस दुःख को

सहन किया। दलपति शाह की मृत्यु के बाद उनका पुत्र वीर नारायण गद्दी पर बैठा। रानी दुर्गावती उसकी संरक्षिका बनी और राज-काज स्वयं देखने लगी। वे सदैव प्रजा के दुःख-सुख का ध्यान रखती थीं। चतुर और बुद्धिमान मंत्री आधार सिंह की सलाह और सहायता से रानी दुर्गावती ने अपने राज्य की सीमा बढ़ा ली। राज्य के साथ-साथ उसने सुसज्जित स्थायी सेना भी बनाई और अपनी वीरता, उदारता, चतुराई से राजनैतिक एकता स्थापित की। गोंडवाना राज्य शक्तिशाली और संपन्न राज्यों में गिना जाने लगा।

रानी दुर्गावती की योग्यता एवं वीरता की प्रशंसा अकबर ने सुनी। क्रूर अकबर जिसे कइयों ने महानता का झूठा खिताब दे रखा था उसने आसफ खँ नामक सरदार को गोंडवाना के गढ़मंडल पर चढ़ाई करने का आदेश दे दिया। ये सोच कर कि एक औरत कितनी देर लड़ पाएगी। उसका हत्यारा सरदार आसफ खँ ने भी समझा कि दुर्गावती महिला है, अकबर के प्रताप से भयभीत होकर आत्मसमर्पण कर देगी। परन्तु रानी दुर्गावती को अपनी योग्यता, साधन और सैन्य शक्ति पर इतना विश्वास था कि उसे अकबर की सेना से भी कोई भय नहीं था। रानी दुर्गावती के मंत्री ने आसफ खँ की सेना और सज्जा को देखकर युद्ध न करने की सलाह दी।

परन्तु रानी ने कहा, “कलंकित जीवन जीने की अपेक्षा शान से मर जाना अच्छा है। आसफ खँ जैसे साधारण सूबेदार के सामने झुकना लज्जा की बात है। रानी सैनिक के वेश में घोड़े पर सवार होकर निकल पड़ी। रानी को सैनिक के वेश में देखकर आसफ खँ के होश उड़ गये। रणक्षेत्र में रानी के सैनिक उत्साहित होकर शत्रुओं को काटने लगे। रानी भी शत्रुओं पर टूट पड़ी। देखते ही देखते दुश्मनों की सेना मैदान छोड़कर भाग निकली। आसफ खँ बड़ी कठिनाई से अपने प्राण बचाने में सफल हुआ। आसफ खँ की बुरी तरह हार सुनकर अकबर बहुत क्रोधित हुआ और अपनी क्रूरता की हदें लाँघता हुआ डेढ़ वर्ष बाद उसने पुनः आसफ खँ को गढ़मंडल पर

आक्रमण करने भेजा। रानी तथा आसफ खाँ के बीच घमासान युद्ध हुआ। तोपों का वार होने पर भी रानी ने हिम्मत नहीं हारी। रानी हाथी पर सवार होकर सेना का संचालन कर रही थी। उसने मुगल तोपचियों का सिर काट डाला। यह देखकर आसफ खाँ की सेना फिर भाग खड़ी हुई। दो बार हारकर वह कामुक, जल्लाद अकबर और भी अधिक क्रोध, लज्जा और ग्लानि से भर गया।

रानी दुर्गावती अपनी राजधानी में विजयोत्सव मना रही थी। उसी गढ़मंडल के एक सरदार ने रानी को धोखा दे दिया। उसने गढ़मंडल का सारा भेद अकबर के सरदार आसफ खाँ को बता दिया। आसफ खाँ ने अपनी हार का बदला लेने के लिए तीसरी बार गढ़मंडल पर आक्रमण किया। रानी ने अपने पुत्र के नेतृत्व में सेना भेजकर स्वयं एक टुकड़ी का नेतृत्व संभाला। दुश्मनों के छक्के छूटने लगे। उसी बीच रानी ने देखा कि उसका 15 वर्ष का पुत्र घायल होकर घोड़े से गिर गया है। रानी विचलित न हुई। उसकी सेना के कई वीर पुरुषों ने वीर नारायण को सुरक्षित स्थान पर पहुँचा दिया और रानी से प्रार्थना की कि वे अपने पुत्र का अंतिम दर्शन कर लें। रानी ने उत्तर दिया—यह समय पुत्र से मिलने का नहीं है। मुझे खुशी है कि मेरे वीर पुत्र ने युद्ध भूमि में वीर गति पाई है। अतः मैं उससे देवलोक में ही मिलूँगी।

वीर पुत्र की स्थिति देखकर रानी दो गुने उत्साह से तलवार चलाने लगी। दुश्मनों के सिर कट-कट कर जमीन पर गिरने लगे। तभी दुश्मनों का एक बाण रानी की आँख में जा लगा और दूसरा तीर रानी के गर्दन में लगा। रानी समझ गई कि अब मृत्यु निश्चित है। यह सोचकर कि जीते जी दुश्मनों की पकड़ में न आऊँ उन्होंने अपनी ही तलवार अपनी छाती में भोंक ली और अपने प्राणों की बलि दे दी। इनका निधन 24 जून, 1564 को हुआ। रानी दुर्गावती ने लगभग 16 वर्षों तक संरक्षिका के रूप में शासन किया।

महान वीरांगना को कोटि-कोटि नमन!

The World Said, 'This was a Man' (14 Nov. Birth Anniversary of Jawahar Lal Nehru)

-Karan Singh

The memory of great men often fades with times; The Gandhi generation has gone and the Nehru generation is passing rapidly. It is, therefore, important to preserve the legacy of these remarkable leaders so that future generations remain aware of their contribution to achieving and consolidating our dearly won freedom.

We now take our Independence for granted, but it is often forgotten that at least a million people were brutally murdered in the process and as many as ten million uprooted from their homes on both sides in what was probably the largest mass migration in human history. To stabilise and consolidate manship of a high order, and the Cabinet, led by Jawaharlal Nehru and including stalwarts like Sardar Vallabh bhai Patel as deputy prime minister and Maulana Abul Kalam Azad, was able to do this. The first great achievement of Nehru after Independence, therefore, was to hold the ship of state firm amid the turbulent waters of the Partition process, despite predictions of the prophets of doom including Winston Churchill, who said that after the British left India would Balkanise and break up into a dozen units.

The second great task was, after centuries of foreign rule for India to get itself a new Constitution. Himself an impeccable parliamentarian, Nehru not only took a keen interest in the framing of the Constitution but also attended Parliament for long hours answered questions and in particular spoke on foreign relations, a portfolio he had kept with himself.

After Partition, India was a patchwork quilt consisting of what used to be called 'British India' and hundreds of princely states ranging from large ones like Jammu and Kashmir, Hyderabad, Mysore, Baroda and Gwalior to tiny principalities. Knitting these separate units into a single State was a massive task, the main credit for which goes to Sardar Vallabh bhai Patel. The non-violent integration of so many feudal states into a democracy was surely unprecedented in world history. Although Nehru left this area mainly to Patel, he closely monitored the whole pro-

cess and, despite his strong anti-feelings, he realised the importance of seeking the cooperation of the ruling princes. Nehru was deeply committed to the development of science and what he called the scientific temper, an attitude devoid of superstition and blind faith. For this purpose he had the foresight to set up the Indian Institutes of Technology in major cities around the country.

The underpinning of the whole saga of independent India has been an unwavering commitment of democracy. Nehru, steeped in the liberal democratic traditions of Britain, the republican ideals of the French Revolution, was a firm votary of democracy. It is interesting to recall an anonymous letter that appeared in the late 1930s in the Modern Review saying:

"(Nehru) has all the makings of a dictator in him—vast popularity, a strong will directed to a well-defined purpose, energy, pride, organizational capacity, ability, hardness, and with all his love of the crowd, an intolerance of others and a certain contempt of the weak and the inefficient.... From the far north to Cape Comorian he has gone like some triumphant Caesar, leaving trail of glory and legend behind him.. (I)s it his will to power that is driving him from crowd? His conceit is already formidable. He must be checked. We want no Caesars." Astonishingly, he had written that article pseudonymously!

A major triumph consisted in his leadership of what came to be known as the Non-Aligned Movement, along with President Nasser of Egypt, President Tito of Yugoslavia and Archbishop Makarios of Cyprus. President Sukarno of Indonesia was also involved, although his actions were often erratic.

His greatest tragedy, of course, was China. Nehru believed that the new China, which emerged after the overthrow of the previous regime, and which had suffered long periods of colonial domination, would be a natural ally of India in the post-colonial period. Despite the long undemarcated border with China, Nehru was convinced that differences could be sorted out in a spirit of goodwill and mutual adjustment. As it turned out he underestimated the Chinese drive for power. The whole Chinese disaster has been widely researched and written up, except that the Henderson Brooks' report on the debacle has still not been

made public.

The whole episode caused Nehru immense shock and embarrassment. He was obliged to sack his favourite Krishna Menon. The failure of the whole Panchsheel approach to China was something that shattered Nehru's psyche. He never really recovered from this setback and passed away within less than two years thereafter. Despite the Chinese debacle, the Indian Foreign Service today owes its origin to him, because after the British had left he had to build the whole service virtually from scratch.

Another area in which he faced difficulties, of course, was the issue of Jammu and Kashmir. Suffice it to say, after my father (Maharaja Hari Singh) had signed the Instrument of Accession in the wake of the Pakistani invasion, the much criticised reference to the United Nations once again flowed from his idealism and his firm belief, strongly encouraged by Lord Mountbatten, that the newly created international body would clearly identify the aggressor and take steps to have the invasion withdrawn.

Nehru was a bitter opponent of religious fundamentalism, whether Muslim or Hindu. There is a view that Nehru's attitude towards religion tended to be dismissive, and that despite all that he has written in the Discovery of India, he was never at ease with organised religion. This was largely true, though in his writings he did pay rich homage to the Upanishads and Shankaracharya, and he was particularly impressed by the Buddha and his teachings.

The people of India held Nehru in special affection which is reflected in his last will and testament, where he says: "If any people choose to think of me, then I should like them to say this was man who, with all his mind and heart, loved India and the Indian people. And they, in turn, were indulgent to him and gave him of their love most abundantly and extravagantly."

I will close with another quotation that could appropriately be directed towards Nehru. It is from Shakespeare's Julius Caesar and refers to Brutus. But it could very well apply to Nehru. "His life was gentle, and the elements so mixed in him that nature might stand up and say to all the world this was a man."

DIALOGUE BETWEEN PRINCE RAMA & SAGE VASISTHTA

-Raghunandan

On his return to Ayodhya after a pilgrimage, Prince Rama is possessed with questions on the purpose of life, and the meaning of existence. He becomes totally disinterested in day-to-day activities. Alarmed, his attendants report this to his father, King Dasaratha. Just then, Sage Vishwamitra visits with a request that let Rama accompany him to the forest to contain the demons disturbing his penance.

When Dasaratha informs Vishwamitra of Rama's state of mind, Vishwamitra asks Rama to make a clean breast of what disturbs him, and the prince speaks in detail. So begins the 'Yoga Vasistha'. Rama speaks about the repetitiveness of life, insatiability of desires, limitations of life and the world. This section is the 'Vairagya Prakarana', Divine Disinterest.

After listening to the prince, Vishwamitra requests Sage Vasishtha to enlighten him with stories on Vedanta. The dialogue between Rama and Vasishtha forms an instructive and useful narrative to all seekers in every stage of growth. It is not enough to ask questions and seek answers intellectually; we have to turn these questions into a quest. For the quest, one has to make Prayatna, effort, and have Paurusha, grit, to pursue the path and have total trust in self. The greatest impediments are our Vasanas, tendencies which give way to stubborn habits. The seeker is asked to develop Shubha Vasanas, such tendencies that free us, in turn dissolving Ashubha Vasanas, negative tendencies. The first quality a seeker should have is Shama, sweet patience, as one can never be in a hurry to achieve. The second is Santosha, contentment in what one has, but discontent in what one is. With these, the seeker develops Vichara, the capacity to contemplate, analyse and discriminate. These are possible with Sadhusanga, association

of the wise, in person or through scriptures. This Mumukshu Prakarana, divine longing, describes the qualities of a seeker.

The paradox called life, governed as it is by the dualities of pleasure-pain and happiness-misery, confuses us. The sage makes it bold to state that the origin of existence is the "i" or the entity behind every action (i-act), experience (i-experience) and knowledge (i-know). He tells Rama that the tendency to experience, Bhoga Vasana, is gross, while Bheda Vasana or the tendency to differentiate is basic to this "i" which is the root cause of mind.

These principles are illustrated via stories in the section titled Srishti Prakarana. Origin for most of us this "i" has become our master! Factors empowering this servant are dealt with in the next section titled Sthiti Prakarana Sustenance. Involvement at the mental level and indulgence at the sense level; pride, and fear strengthen the "i".

Controlling mind and ego forms the subject matter of the fifth portion entitled Upashama Prakarana-Quiescence. The Yoga Vashishta recommends methods to pacify the mind through understanding, by defining Yoga as a technique for quietening the mind. It states Yoga and Samyagavekshanam as the two broad methods. Yoga quieten mental activity, while Samyagavekshanam is the art of witnessing inner transactions of mind, intellect, memory and ego.

The most sublime portion is Nirvana Prakarana-Transcendence, where in stories narrate the transcendence, where stories narrate the transcendence of time, space; practical method of contemplation; real-renunciation; Chittashuddhi, purity of mind, and the seven stages a seeker passes through on his pilgrimage towards enlightenment. Yoga Vasishtha is a user's manual for utilising the great body-mind complex we are endowed with by the Existence for identifying and merging with it.

Vedas on Education

-N.K. Chaudhary

What should be the main objective of Education?

That is one topic that remains under discussion perpetually. It would be both interesting and enlightening to see what the Vedas had to say on this topic.

Atherva Veda VII.6.1 states "Oh Lord! illuminate the learner or the student for a higher and happy life, "Further, A.V. VII.68.3 elaborates "Learning and acquisition of wealth are two important objectives by which a successful life can be led."

There is no stigma attached to acquisition of wealth as being one of the objectives of education. All the same it is emphasised that, "Knowledge of learning makes one humbler, free of ego. This humility leads to proficiency and by proficiency one earns, wealth and by wealth one makes one's life happy and successful." (A.V. VI.41)

Yajurveda stipulates, "The teacher after imparting knowledge and wisdom to students directs them for practical application so that they can use of this knowledge in various pursuits."

When and where should a child's education begin?

The answer comes from Rig Veda V.47.6

"A mother should impart education to her children so as to broaden their horizon. At this stage good manners are to be taught so that children behave properly with elders and in assemblies."

The Vedas recommend separate schools for boys and girls. The girls schools should have women teachers. (Y.V. 11.59). About the role of women teachers it has been said, "Learned ladies should remove ignorance of the girls and broaden their outlook" The Atharva Veda is particular about women having access to attainment of knowledge. "Atharva Veda XIV 1.64 specifies "Women should have opportunity to attain knowledge of Vedas from all the four corners.

"Those maidens who study the Vedas have perfect self confidence and become the ornaments of human race. (R.V. 1.3.77)

It is high time the framers of policies on education charter the course of school programmes keeping in mind these guidelines set by the scriptures that are believed to be of divine origin.

**C2A/211 Janakpuri,
New Delhi-110058**

स्वाहा मरुद्भिः परि श्रीयस्व दिवः संस्पृशस्पाहि।

मधु मधु मधु॥ (यजुर्वेद 37-13)

ऋषिः - दध्यङ्गाथर्वण, देवता-विद्वान्, छन्दः-निचृद्गायत्री
हे मनुष्य, जो विद्वान् ज्ञान से परिपूर्ण हैं, जिनकी वाणी सत्य और माधुर्य से भरी हुई है, जिनके कर्म उत्तम और मधुर हैं और जो ईश्वर के प्रति समर्पित हैं, उसकी उपासना करते हैं, व सभी ओर से सुरक्षित हैं। वे सभी के बीच में ज्योति की तरह चमकते हैं।



A man, who has acquired knowledge, who speaks sweet truthful words, who's deed are noble and sweet and who's adoration to the God is full of sweetness, is protected from all directions. He shines among all. (Yajurved37-13)